Bibliography

:: सन्दर्भिका ::

:: सन्दर्भिका ::

परिशिष्ट : स : उपजीव्य ग्रन्थों की सूची :

§1§ कर्मभूमि : सरस्वती प्रेस : दिल्ली , इलाहाबाद ।

§2§ कायाकल्प : सरस्वती प्रेस : दिल्ली , इलाहाबाद ।

§3§ गबन : सरस्वती प्रेस : इलाहाबाद ।

§4§ गोदान : वही : दिल्ली , इलाहाबाद ।

§5§ निर्मला : वही : वही ।

§6§ प्रेमा या प्रतिज्ञा : इण्डियन प्रेस : इलाहाबाद ।

§7§ प्रेमाश्रम : सरस्वतीप्रेस : दिल्ली , इलाहाबाद ।

§8§ मंगलसूत्र तथा अन्य रचनाएं : वही : वही ।

§9§ मंगलाचरण : वही : वही ।

§10§ रंगभूमि : वही : वही ।

§11§ वरदान : वही : वही ।

§12§ विविध प्रसंग : भाग-1, 2, 3 : वही : वही ।

§13§ सेवासदन : वही : वही ।

परिशिष्ट : र : सहायक ग्रन्थों की सूची §हिन्दी§

§1§ आधुनिक साहित्य : आचार्य नंददुलारे वाजपेयी : भारती भण्डार : इलाहाबाद ।

§2§ आधुनिक लेखिकाओं के नगरीय परिवेश के उपन्यास : डा. चारुकान्त देसाई : चिंतन प्रकाशन : कानपुर ।

§3§ इमरतिया §उपन्यास§ : नागार्जुन : राजपाल : दिल्ली ।

(4) अलग अलग वैतरणी (उपन्यास) : डा. शिवप्रसाद सिंह : लोकभारती प्रकाशन : इलाहाबाद ।

(5) आधा गाँव (उपन्यास) : डा. राही मासूम रजा : राजकमल प्रकाशन : दिल्ली ।

(6) "आधुनिक उपन्यास : विविध आयाम" : डा. विवेकीराय : अनिल प्रकाशन : इलाहाबाद ।

(7) एक टुकड़ा इतिहास : (उपन्यास) गोपाल उपाध्याय : सामयिक प्रकाशन : दिल्ली ।

(8) औरत होने की सजा : अरविन्द जैन : विकास पेपर बैक्स : गांधीनगर : दिल्ली ।

(9) औरत के हक में : तसलीमा नसरीन : वाणी प्रकाशन : दिल्ली ।

(10) औरों के सहारे : राजेन्द्र यादव : राधाकृष्ण प्रका. दिल्ली ।

(11) उन्माद (उपन्यास) : डा. भगवानसिंह : राजकमल प्रकाशन : दिल्ली ।

(12) इदन्नमम: मैत्रेयी पुष्पा (उप.) : राजकमल : दिल्ली ।

(13) एक मूठ सरसों (उप.) : शैलेश मटियानी : आत्माराम एण्ड सन्स : दिल्ली ।

(14) कलम का सिपाही : अमृतराय : हंस प्रका. : इलाहाबाद ।

(15) कलम का मजदूर : मदनगोपाल : राजकमल : दिल्ली ।

(16) चौथी मुट्ठी (उप.) : शैलेश मटियानी : आत्माराम : दिल्ली ।

(17) जल टूटता हुआ (उप.) : डा. रामदरश मिश्र : हिन्दी प्रचारक संस्थान : वाराणसी ।

(18) चिन्तनिका : डा. चारुकान्त देसाई : पूर्व-भारती प्रकाशन : दिल्ली ।

(19) चिन्तामणि भा-1 : आ. रामचन्द्र शुक्ल : नागरी प्रचारिणी सभा : बनारस ।

(20) कुछ विचार : प्रेमचन्द : सरस्वती प्रेस : दिल्ली, इलाहाबाद ।

{21} काव्य के रूप : डा. गुलाबराय : आत्माराम : दिल्ली ।

{22} कभी न छोड़ें खेत : जगदीशचन्द्र : राजकमल : दिल्ली ।

{23} त्यागपत्र :{ उप.} : जैनेन्द्र : पूर्वोदय प्रका. दिल्ली ।

{24} डाकबंगला { उप.} : कमलेश्वर : राजपाल : दिल्ली ।

{25} ढहती दीवारें {उप.} : मीना दास : पैनमैन पब्लिशर्स : दिल्ली ।

{26} तलाश {उप.} : राजी सेठ : राजकमल : दिल्ली ।

{27} धरती धन न अपना : जगदीशचन्द्र {उप} : राजकमल : दिल्ली ।

{28} नदी नहीं मुड़ती :उप. : डा. भगवतीशरण मिश्र : राजपाल : दिल्ली ।

{29} नदी फिर बह चली : हिमांशु श्रीवास्तव : उपन्यास : हिन्दी प्रचा. वाराणसी ।

{30} नाच्यौ बहुत गोपाल : उपन्यास : अमृतलाल नागर : राजपाल: दिल्ली ।

{31} नागवल्लरी : उपन्यास : शैलेश मटियानी : विभा प्रका. इलाहाबाद ।

{32} नरक-दर-नरक : उपन्यास : ममता कालिया : लोकभारती प्रकाशन : इलाहाबाद ।

{33} पानी के प्राचीर : उपन्यास : डा. रामदरश मिश्र : हिन्दी प्रचा. वाराणसी ।

{34} पचपन खंभे लाल दीवारें {उप} : उषा प्रियंवदा : राजकमल : दिल्ली ।

{35} पतझड़ की आवाजें{उप} : निरुपमा सेवती : इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन : दिल्ली ।

{36} "प्रेमचन्द : एक कृती व्यक्तित्व" : जैनेन्द्र : पूर्वोदय प्रकाशन : दिल्ली ।

{37} "प्रेमचन्द : व्यक्ति और साहित्यकार" : डा. मन्मथनाथ गुप्त : सरस्वतीप्रेस : इलाहाबाद ।

(38) प्रेमचन्द और उनका युग : डा. रामविलास शर्मा : राजकमल : दिल्ली ।

(39) "प्रेमचन्द : जीवन कला और कृतित्व" : डा. हंसराज रहबर : आत्माराम एण्ड सन्स : दिल्ली ।

(40) प्रेमचन्द और अछूत समस्या : डा. कांतिमोहन : जनसुलभ साहित्य प्रकाशन : दिल्ली ।

(41) प्रेमचन्द साहित्य में दलित चेतना : डा. बलवन्त साधु जाधव : अलका प्रकाशन : कानपुर ।

(42) प्रेमचन्द घर में : शिवरानी देवी : आत्माराम : दिल्ली ।

(43) "प्रेमचन्द : चिट्ठीपत्री : सरस्वती प्रेस : इलाहाबाद ।

(44) बबूल (उप.) : डा. विवेकीराय : विश्वविद्यालय प्रकाशन : वाराणसी ।

(45) बेघर (उप.) : ममता कालिया : [illegible] रचना प्रकाशन : इलाहा. ।

(46) बिजली के फूल (काव्य-संग्रह) : डा. पारुकान्त देसाई : रोमा प्रकाशन : बड़ौदा ।

(47) भारतीय समाज तथा संस्कृति : डा. एम.एल. गुप्ता : साहित्य भवन : आगरा ।

(48) भारतीय चिंतन परंपरा : डा. के. दामोदरन ।

(49) भारत का इतिहास : रोमिला थापर : राजकमल : दिल्ली ।

(50) भारतीय साहित्य कोश : सं. डा. नगेन्द्र : नेशनल पब्लिशिंग हाउस : दिल्ली ।

(51) भारतीय मिथक कोश : डा. उषापुरी विद्यावाचस्पति : नेशनल पब्लिशिंग हाउस : दिल्ली ।

(52) भारतीय महाकथा : गुजराती : डा. रमणलाल जोशी : युनि. ग्रन्थ निर्माण बोर्ड : अहमदाबाद ।

(53) मकान-दर-मकान (उपन्यास) : बाला दुबे : प्रभात प्रका. दिल्ली ।

(54) मुरदाघर : उपन्यास : जगदम्बाप्रसाद दीक्षित : राधाकृष्ण प्रका. दिल्ली ।

§55§ मुझे चांद चाहिए :उपन्यास : सुरेन्द्र वर्मा : राजकमल : दिल्ली ।

§56§ मानव और संस्कृति : डा. श्यामाचरण दुबे : राजकमल : दिल्ली ।

§57§ मार्क्स और पिछड़े हुए लोग : डा. रामविलास शर्मा : राजकमल : दिल्ली ।

§58§ मानसमाला §काव्य§ : डा. पारुकान्त देसाई : कृष्णा प्रकाशन : जयपुर ।

§59§ युगनिर्माता प्रेमचन्द तथा कुछ अन्य निबंध : डा. पारुकान्त देसाई : रोमा प्रकाशन : बड़ौदा ।

§60§ यथार्थवाद : डा. शिवकुमार मिश्र : मैकमिलन : दिल्ली ।

§61§ रेखा §उप§ : भगवतीचरण वर्मा : राजकमल : दिल्ली ।

§62§ रेत की मछली §उप§ : कान्ता भारती : लोकभारती : इलाहा. ।

§63§ रुकोगी नहीं राधिका ? §उप§ : उषा प्रियंवदा : अक्षर प्रका. दिल्ली ।

§64§ राग दरबारी §उप§ : श्रीलाल शुक्ल : राजकमल : दिल्ली ।

§65§ लोकऋण :उप: डा. विवेकीराय : लोकभारती : इलाहाबाद ।

§66§ वे दिन : उप : निर्मल वर्मा : राजकमल : दिल्ली ।

§67§ सीढ़ियाँ : उप : शशिप्रभा शास्त्री : नेशनल : दिल्ली ।

§68§ सूखता हुआ तालाब : उप : डा. रामदरश मिश्र : नेशनल ।

§69§ सूरज के आने तक : उप : डा. भगवतीशरण मिश्र : राजपाल ।

§70§ साँप और सीढ़ी : उप : शानी : राजकमल : दिल्ली ।

§71§ सूखे सेमल के वृन्तों पर : काव्य : डा. पारुकान्त देसाई : दर्पण प्रकाशन : लखनऊ , भोपाल ।

§72§ समीक्षायण : डा. पारुकान्त देसाई : सूर्य-भारती प्रका. दिल्ली ।

§73§ साठोत्तरी हिन्दी उपन्यास : डा. पारुकान्त देसाई : सूर्य प्रकाशन : दिल्ली ।

§74§ संस्कृति के चार अध्याय : डा. रामधारीसिंह दिनकर : उदयाचल प्रकाशन : पटना ।

{75} शताब्दी के ढलते वर्षों में : निर्मल वर्मा : राजकमल : दिल्ली ।
{76} हिन्दी उपन्यास साहित्य का अध्ययन : डा. एस.एन. गणेशन: राजपाल एण्ड सन्स : दिल्ली ।
{77} हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त सुगम इतिहास : डा. पारुकान्त देसाई : कृपा प्रकाशन : जयपुर ।
{78} "हिन्दी साहित्य : आधुनिक परिदृश्य " : अज्ञेय : राधाकृष्ण प्रकाशन : दिल्ली ।
{79} "हिन्दी उपन्यास : सामाजिक चेतना " : डा. कुंवरपालसिंह : पाण्डुलिपि प्रकाशन : दिल्ली ।
{80} हिन्दी उपन्यास पर पाश्चात्य प्रभाव : डा. भारतभूषण अग्रवाल : रूपाम्बरा जैन एवं संतति : दिल्ली ।
{81} " हिन्दी उपन्यास: एक अन्तर्यात्रा " : डा. रामदरश मिश्र : राजकमल प्रकाशन : दिल्ली ।
{82} हिन्दी उपन्यासों में दलित वर्ग : डा. कुसुम मेघवाल : संघी प्रकाशन : जयपुर ।
{83} आधुनिक हिन्दी उपन्यासों में नारी के विविध रूपों का चित्रण : डा. मोहम्मद अजहर ढेरीवाला : चिंतन प्रका. कानपुर ।
{84} हिन्दी साहित्य का इतिहास : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : नागरी प्रचारिणी सभा : वाराणसी ।
{85} हिन्दी साहित्य का इतिहास : डा. नगेन्द्र : मयूर पेपर बेक्स : नोएडा : दिल्ली ।

परिशिष्ट – ग : सहायक ग्रन्थों की सूची {अंग्रेजी} :
==

{1} ए थोयेरिस्ट आन नोवेल्स : ज्योर्ज डब्ल्यु.एल. : कोलिन्स सन्स एण्ड कंपनी : लंडन ।
{2} ए ट्रिटाइज आन द नोवेल : राबर्ट लिडेल : जोनाथन केप : लंडन ।

§3§ एन इन्ट्रडक्शन टु द स्टडी आफ लिटरैचर : हडसन : लंडन ।

§4§ अर्बन सोशियोलोजी इन इण्डिया : डा. आशिश बोस : वर्ल्ड प्रेस : कलकत्ता ।

§5§ आस्पेक्ट्स आफ द नोवेल : ई.एम. फारस्टर : ए पेनग्विन इण्टरनेशनल एडिशन ।

§6§ कनसाइज आक्सफर्ड डिक्शनरी : आक्सफर्ड युनि. प्रेस : लंडन ।

§7§ डिसकवरी आफ इण्डिया : पं. जवाहरलाल नेहरू ।

§8§ इण्डियाज क्वेस्ट : नेहरू : एशिया पब्लिशिंग हाउस : दिल्ली ।

§9§ कार्ल मार्क्स एण्ड एंजल्स : फारेन लैंग्वेज पब्लिशिंग हाउसxx हाउस : मोस्को ।

§10§ लाईफ एण्ड वर्क आफ प्रेमचन्द : मनोहर बंदोपाध्याय : पब्लिकेशन डिविजन : गवर्नमेण्ट आफ इण्डिया : दिल्ली ।

§11§ मोडर्न हिस्टरी आफ इण्डिया : डा मनमोहन गुप्ता ।

§12§ राइटर्स एट वर्क: बुक धान विक : लंडन ।

§13§ द राइज आफ द नोवेल : इयान वाट : केलिफोर्निया प्रेस ।

§14§ द स्ट्रक्चर आफ द नोवेल : एडविन म्योर : होगार्थ प्रेस, लंडन ।

§15§ द नोवेल एण्ड द पिपुल : राल्फ फाक्स : फोरेन लैंग्वेज पब्लिशिंग हाउस : मोस्को ।

§16§ द क्राफ्ट आफ फिक्शन : पर्सी ल्युबाक : जोनाथन केप : लंडन ।

§17§ द ह्युमन्स मूवमेन्ट : बार्बरा डेकार्ड : न्युयोर्क ।

परिशिष्ट : ख : पत्र-पत्रिकाएँ :

§1§ आलोचना : दिल्ली ।

§2§एतद : त्रैमासिक : गुजराती : वडोदरा ।

§3§ गन्धर्व : गुजराती : अनियतकालीन : बम्बई ।

§4§ गुजरात समाचार : गुजराती दैनिक : अहमदाबाद-वड़ौदा ।

(5) गुंज : नई दिल्ली ।

(6) टाइम्स आफ इण्डिया : अंग्रेजी दैनिक : बम्बई ।

(7) सादश्यैं : गुजराती : त्रैमासिक : अहमदाबाद ।

(8) धर्मयुग : मुंबई ।

(9) नवभारत टाइम्स : हिन्दी दैनिक : मुंबई ।

(10) परब : गुजराती : अहमदाबाद ।

(11) प्रकर : दिल्ली ।

(12) कुमार : गुजराती ।

(13) प्रगतिशील आकल्प : मुंबई ।

(14) मधुवन : xxxxx दिल्ली ।

(15) भाषा-सेतु : अहमदाबाद ।

(16) मुक्त प्रश्न : xxxxx उदयपुर ।

(17) मध्यान्तर : हैदराबाद ।

(18) रंग-भरेरा : अहमदाबाद ।

(19) लोकसत्ता : गुजराती दैनिक : बड़ौदा ।

(20) वीणा : इन्दौर ।

(21) समकालीन साहित्य : दिल्ली ।

(22) संदेश : गुजराती दैनिक : बड़ौदा ।

(23) समान्तर : दिल्ली ।

(24) समय-चेतना : दिल्ली

(25) हंस : दिल्ली ।

xxxxx XXXXXX xxxxx

SMT. HANSA MEHTA LIBRARY
The M. S. University of Baroda

: महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बड़ौदा की
पी-एच.डी. उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबन्ध की सार-संक्षेपिका :

: विषय :

: प्रेमचन्द के उपन्यासों का पुनर्मूल्यांकन :

: अनुसंधित्सु :
कनुभाई विछियाभाई निनामा
प्राध्यापक, हिन्दी विभाग,
म. स. विश्वविद्यालय, बड़ौदा ।

- निर्देशक -
डॉ. पारुकांत देसाई
प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
म. स. विश्वविद्यालय, बड़ौदा ।

हिन्दी विभाग, कला संकाय
महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बड़ौदा (गुजरात)
सन २००१ ई.

:: महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बड़ौदा की पी-एच.डी. उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध-प्रबंध की सार-संक्षेपिका ::

==

:: विषय ::

==========

:: प्रेमचन्द के उपन्यासों का पुनर्मूल्यांकन ::

:: अनुसंधित्सु ::

======

कलुभाई विछियाभाई निनामा,

प्राध्यापक : हिन्दी विभाग,

म.स. विश्वविद्यालय, बड़ौदा.

:: निर्देशक ::

======

डा. पारूकान्त देसाई,

प्रोफेसर एवं अध्यक्ष : हिन्दी विभाग,

म.स. विश्वविद्यालय, बड़ौदा.

F.N. cs.

Professor & Head Guide
Deptt. of Hindi
Faculty of Arts
M. S. U., Baroda.

:: महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय , बड़ौदा की पी-एच.डी. उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध-प्रबंध की सार-संक्षेपिका ::

==

उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचन्द हिन्दी साहित्य के एक कालजयी साहित्यकार हैं । मूल नाम धनपतराय । चाचा-ताऊ नवाब कहते थे । अतः नवाबराय नाम से ही सर्वप्रथम उर्दू में लिखने की शुरूआत की । पर देखा जाय तो वे न धनपत थे और न नवाब । ताज़िन्दगी आर्थिक-संघर्ष करते रहे और नवाबों-सामन्तों के खिलाफ लिखते रहे , पर हां दिल से वे दोनों थे -- अमीर भी और नवाब भी ।

उनका हृदय प्रेम से लबालब था । पर यह प्रेम मानवता के प्रति था , न्याय के प्रति था , शोषितों के प्रति था , दलितों के प्रति था , साहित्य के प्रति था , देश के प्रति था । आजीवन वे

शोषण के खिलाफ लड़ते रहे । यह शोषण चार प्रकार का था — गरीब मजदूर और किसानों का शोषण , नारियों का शोषण , दलितों का शोषण और साम्राज्यवादी ताकतों द्वारा समूचे देश का शोषण । इस चतुर्मुखी शोषण के खिलाफ यह आदमी अपनी कलम लेकर खड़ा हो गया । इसीलिए तो अमृतराय उनको "कलम का सिपाही " कहते हैं ।

जितना काम प्रेमचन्द लिखने-पढ़ने का करते थे , जिस प्रकार के वर्ग के लिए करते थे , जिन सिद्धान्तों के तहत करते थे ; उतना काम अन्यत्र करते या लेखन में ही पर लक्ष्मीपरस्त काम करते तो उनके यहां रूपयों की टकसाल पड़ सकती थी । पर प्रेमचन्द लक्ष्मीपुत्र नहीं, सरस्वतीपुत्र थे । अतः जिन्दगीभर कलम-घिसाई करते रहे , मजदूरी करते रहे । लिहाजा उनका दूसरा जीवनीकार — मदनगोपाल — उनको "कलम का मजदूर " विशेषण से नवाजता है ।

प्रेमचन्द समाज और साहित्य के एक जागरूक प्रहरी हैं । आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी कहा करते थे कि यदि कोई उत्तर-प्रदेश के ग्रामीण जीवन का जायजा लेना चाहता है , तो प्रेमचन्द से अच्छा परिचायक दूसरा कोई न मिलेगा । यही बात तत्कालीन समसामयिक इतिहास के संदर्भ में भी कह सकते हैं कि प्रेमचन्द के उपन्यासों तथा कहानियों के जरिए हम तत्कालीन सामाजिक-राजनीतिक-धार्मिक आंदोलनों तथा गतिविधियों के संदर्भों और परिप्रेक्ष्यों को भलीभांति जान सकते हैं । इतना ही नहीं वैश्विक गतिविधियों — राजनीतिक और साहित्यिक — का व्यापक फलक भी सर्वप्रथम यहां खुलता है ।

सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला का प्रेमचन्द के लिए कथन था — " आखें कोनौं के पास आयं तो आहि के पास आयं " — अर्थात् आखें किसीके पास हैं तो इन्हीं के पास हैं । यहां आंखों

से तात्पर्य व्यक्ति, समाज और देश की गतिविधियों और चरित्र को देखने-परखने की नजर तो है ही, वह दृष्टि भी है, जिसके जरिए इनके वस्तुनिष्ठ यथार्थ स्वरूप को आत्मसात किया जा सकता है। वैश्विक स्तर पर उठने वाले, विश्व के किसी महान साहित्यकार के साथ तालमेल रखने वाले, उनके साथ किन्हीं मायनों में समानता रखने वाले वे हिन्दी के प्रथम साहित्यकार हैं। मानवीय संवेदना की उनकी पूंजी विश्व के देदिप्यमान नक्षत्रों में उन्हें विराजित करती है। अतः ऐसे बड़े व्यापक फलक वाले साहित्यकार — कथाकार — उपन्यासकार का अध्ययन बार-बार हो, अलग-अलग कोणों से हो, अलग-अलग दृष्टियों से हो उसे सर्वथा उपयुक्त ही माना जाएगा। यहां प्रेमचन्द के उपन्यासों के पुनर्मूल्यांकन का एक नम्र प्रयास किया गया है।

उपन्यास की तमाम परिभाषाओं पर विचार करने के उपरांत उसकी एक सामान्यीकृत परिभाषा इस रूप में उभरकर आती है कि उपन्यास एक यथार्थधर्मी विधा है। उसमें सामाजिक या वैयक्तिक या दोनों प्रकार के यथार्थ का आकलन होता है। यह आकलन देशकाल के परिप्रेक्ष्य में एक निश्चित जीवन-दृष्टि को केन्द्र में रखते हुए होता है। उपन्यास और यथार्थ के गहरे सरोकार हैं। ऐतिहासिक और पौराणिक उपन्यासों में भी चमत्कारपूर्ण मिथकों को यथार्थ के धरातल पर तार्किक संगति के साथ प्रस्तुत करना पड़ता है। यद्यपि सभी कलाओं का संबंध मनुष्य और समाज से तो रहता ही है, तथापि उपन्यास और समाज के अंतरंग संबंधों को देखते हुए उसके सांस्कृतिक एवं समाजशास्त्रीय आयामों को विश्लेषित करना भी लाजमी हो जाता है।

प्रेमचन्द से पूर्व सन् 1878 से हिन्दी में उपन्यास का प्रादुर्भाव हो गया था, परन्तु वह अपरिपक्व एवं अविकसित अवस्था में था। औपन्यासिक संकल्पना का उसमें अभाव-सा प्रतीत होता है। मानव-

चरित्र की सही पहचान वहाँ एक सिरे से गायब है। समस्याओं का सरलीकृत रूप और कथासूत्रों का आधिक्य उन्हें औपन्यासिक यथार्थ से कुछ दूर ले जाती है। ऐतिहासिक उपन्यास भी इतिहास और उपन्यास कम रम्याख्यान अधिक लगते हैं। जासूसी उपन्यास अत्यंत सतही और तिलस्मी उपन्यास वायवी हैं। कुल मिलाकर यही कहा जा सकता है कि इन उपन्यासों का ऐतिहासिक महत्व तो है, किन्तु इनका कोई दूरगामी प्रभाव साहित्य पर लक्षित नहीं होता, न ही ये इस कला को अधिक विकसित कर पाते हैं। बाहर तो नहीं, किन्तु भारत में भी, अन्य प्रान्तों में इनको प्रायः अनदेखा किया गया है। क्या यह अत्यंत सूचक नहीं है कि प्रेमचन्द के पूर्व अन्य भाषा-भाषी किसी भी लेखक ने हिन्दी उपन्यासों का अपनी भाषा में अनुवाद नहीं किया या उन्हें उस योग्य नहीं समझा ? वस्तुतः हिन्दी उपन्यास-साहित्य को भारतीय और वैश्विक फलक पर प्रतिष्ठित करने का श्रेय मुंशी प्रेमचन्द को ही जाता है।

डा. रामविलास शर्मा ने प्रेमचन्द को एक युगनिर्माता साहित्यकार माना है। हिन्दी के आधुनिक काल में कविता के क्षेत्र में जो छायावाद है, कथा-साहित्य के क्षेत्र में वही प्रेमचन्द युग है। अब छायावाद का प्रभाव तो केवल कविता का अभ्यास करने वाले नौसिखिए कवि होने के इच्छुक लोगों तक सीमित है, जबकि प्रेमचन्द-स्कूल के लेखकों की परंपरा तो आज भी बनी हुई है, इतना ही नहीं बल्कि कोई भी लेखक उस स्कूल का होने में स्वयं को गौरवान्वित अनुभव करता है। दूसरे इस तथ्य को विस्मृत नहीं करना चाहिए कि आधुनिक काल में किसी युग का नामकरण तीन साहित्यकारों को लेकर हुआ है — भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी और प्रेमचन्द। भारतेन्दु बाबू का कार्य अत्यन्त श्लाघनीय है, किन्तु वे अतुल संपत्ति के स्वामी थे,

और उनके सामने कोई आर्थिक समस्या नहीं थी । यद्यपि अपनी संपत्ति लुटा देना भी कोई मामूली काम नहीं है, बिरले ही ऐसा कर पाते हैं, तथापि कदम-कदम पर प्रेमचन्द को जो आर्थिक संघर्ष करना पड़ा था, वह वाली स्थिति तो उनकी नहीं ही थी । पंडित महावीरप्रसाद द्विवेदीजी के पास एक संस्था की शक्ति जुड़ी हुई थी, यद्यपि यहां भी हम कह सकते हैं कि अच्छी-खासी सरकारी नौकरी को लात मारकर, कम वेतनवाली साहित्यिक पत्रिका के संपादन की नौकरी, व्यवहारतया घाटे का ही सौदा था । पर यह घाटे का सौदा तो सरस्वतीपुत्र हमेशा करते आये हैं । पर सरस्वतीपुत्र ही, बिरले ही, यह ध्यान रहे ।

परन्तु प्रेमचन्द का काम तो इन दोनों से कठिन इन मायनों में था कि उनके पास न अर्थ की ताकत थी, न संस्था की । दूसरे उनकी लड़ाई थी स्थापित व्यवस्था से । अतः चौतरफा संघर्ष उन्हें करना पड़ा । आर्थिक, सामाजिक, पारिवारिक, साहित्यिक सभी स्तरों के संघर्षों से उन्हें दो-चार होना पड़ा । इस संघर्ष की तपिश ने उन्हें और तपाया, और खरा बनाया और उनकी प्रतिभा को और चमकाया ।

प्रेमचन्द ने एक समूची पीढ़ी को तैयार किया — अपने समय में अपनी प्रेरणा और प्रोत्साहन तथा कृतित्व के द्वारा और अपने समय के बाद अपने त्याग और कृतित्व के द्वारा । विश्वम्भरनाथ कौशिक, पाण्डेय बेचन शर्मा "उग्र", चतुरसेन शास्त्री, भगवतीप्रसाद वाजपेयी, ऋषभचरण जैन, जयशंकर प्रसाद, प्रतापनारायण श्रीवास्तव, राजा राधिकारमणप्रसाद सिंह, वृन्दावनलाल वर्मा, सूर्यकान्त त्रिपाठी " निराला ", सियारामशरण गुप्त, गोविन्दवल्लभ पंत, राजेश्वरप्रसाद, धनीराम "प्रेम", प्रफुल्लचन्द्र ओझा, श्रीनाथ सिंह, उषादेवी मित्रा, शिवरानी

देवी , तेजोरानी दीक्षित , चन्द्रशेखर शास्त्री , गंगाप्रसाद श्रीवास्तव , गंगाप्रसाद मिश्र , जैनेन्द्रकुमार , इलाचन्द्र जोशी , भगवतीचरण वर्मा , अज्ञेय , फिराक गोरखपुरी जैसे लेखकों और कवियों को बनाने में उनका जो योगदान है , उसे कोई नकार नहीं सकता । बाद में भी उपेन्द्रनाथ अश्क , अमृतलाल नागर , यशपाल , रेणु , शैलेश मटियानी, हिमांशु श्रीवास्तव , जगदीशचन्द्र , कमलेश्वर , राजेन्द्र यादव , मोहन राकेश , मन्नू भण्डारी , कृष्णा सोबती , कृष्णा अग्निहोत्री , उषा-प्रियंवदा प्रभृति लेखक-लेखिकाएं प्रेमचन्द के पथ को अग्रसरित कर रहे हैं । समकालीन औपन्यासिक परिदृश्य में भी अनगिनत लेखक-लेखिकाएं प्रेम-चन्द के सामाजिक यथार्थ और उनकी अन्तर्वस्तु से प्रेरित व प्रभावित हो रहे हैं । पूरी एक शताब्दी को प्रभावित करने वाला लेखक असंदिग्धतया महान लेखक की पदवी के योग्य ठहरता है , जो अपने युगबोध को आत्मसात करते हुए भविष्यत घटनाओं का खाका भी खिंचता चलता है । ऐसे महान लेखक का अध्ययन बारबार हो , अलग-अलग कोणों और दृष्टियों से , विभिन्न साहित्यिक-समाजशास्त्री मानदण्डों से हो , विज्ञान और समाज और विकास के आलोक में हो यह परम आवश्यक हो जाता है । प्रस्तुत अध्ययन ऐसा ही एक नम्र प्रयास है ।

भाषा और साहित्य और कला में शोध और अनुसंधान का का स्वरूप ठीक वही नहीं होता जो विज्ञान और शास्त्रों में होता है । बुद्धिगत अनुसंधान , तार्किकता , वस्तुनिष्ठता आदि यहां भी होते तो हैं ; किन्तु इनके अतिरिक्त सहृदयता , भाव-प्रवणता और अन्तर्वस्तु की दृष्टिभिन्नताएं जैसे बिन्दु और आयाम भी होते हैं , अतः यह शोध के साथ एक सृष्टि भी है । अतः प्रस्तुत अध्ययन में हमने साहित्य के अध्ययन की अनेकानेक संभावनाओं की ओर दृष्टि-संकेत करते हुए उसकी उपादेयता को उपयुक्त ठहराया है । प्रेमचन्द के औपन्यासिक साहित्य का मूल्यांकन करते हुए या

करने के प्रयत्न में हम कई आयामों को चिह्नित कर सकते हैं । इन आयामों में प्रेमचन्द के उपन्यासों की प्रासंगिकता , समकालीन उपन्यास-साहित्य और प्रेमचन्द , शैशवकालीन अनुभवों के परिप्रेक्ष्य में प्रेमचन्द के औपन्यासिक साहित्य का मनोवैज्ञानिक ढंग से विश्लेषण , दलित-विमर्श के संदर्भ में प्रेमचन्द के उपन्यासों का अध्ययन जैसे कुछ मुद्दे रह सकते हैं , जिनको प्रस्तुत अध्ययन में आधार बनाया गया है ।

प्रत्येक युग के चिंतनधर्मा ऋषिकर्मी साहित्यकारों के सम्मुख एक प्रश्न रहा है कि क्या वे केवल सनातन जीवन-मूल्यों , रूप-सौन्दर्य-कला , के प्रश्नों को लेकर सृजन करते रहें या अपने युग की , अपने समय की महती जन-समस्याओं , जीवन-समस्याओं के रू-ब-रू होकर , उनके सामाजिक सरोकारों को अपने लेखन का हिस्सा बनायें ? दूसरे शब्दों में क्या वे केवल कला के पक्षधर हैं या जीवन के ? जीवन के किसी अंग के या जीवन-अंगी के ? स्वल्प के या समग्र के ? संपन्न के या विपन्न के ? आनंद के या दर्द के ? कहना न होगा कि प्रेमचन्द अपने लेखन के प्रारंभिक दौर से ही मानवीय संवेदना के पक्षधर रहे हैं । उनके लेखन के केन्द्र में मनुष्य और केवल मनुष्य रहा है । कुछ लोग ऐसा सोचते हैं कि यदि हम समसामयिक समस्याओं पर ही लिखते रहेंगे तो तत्काल तो हमारी कृतियों को पढ़ा जायेगा , पर उन समस्याओं के न रहने पर क्या होगा ? तब क्या वे अप्रासंगिक नहीं हो जायेंगे ? इस चिन्ता में वे मरे जा रहे हैं , घुले जा रहे हैं । उन्हें चिन्ता लोगों की नहीं , समाज की नहीं , देश की नहीं , केवल अपनी है । वे भूल जाते हैं कि समग्र विश्व में जीवन एक है , मनुष्य एक है , उनकी मूलभूत वृत्तियाँ एक हैं ; अतः तत्काल का आलेखन करते हुए यदि वे इन मूल अन्तःवृत्तियों की घुलावट करेंगे तो यह समस्या नहीं आयेगी । जीवन का बाह्य-स्वरूप बदलता है , अन्तःवृत्तियाँ एक-सी रहती हैं । वह परतों में रहती हैं , परदों में रहती हैं ,

इन परतों और परदों को हटाने का काम महान साहित्यकार करता है और तब उसे इस प्रकार के सवाल परेशान नहीं करते । सातवें-आठवें दशक के नोबल पुरस्कार विजेता साहित्यकार चैक-कवि जारोस्लाव सेइफर्त के ये शब्द यहां ~~अप्रx~~ अप्रासंगिक नहीं होंगे :" यदि सामान्य मनुष्य ऐसे समय में मौन रहता है तो उसमें उसकी कोई योजना हो सकती है, किन्तु ऐसे समय में यदि लेखक मौन रहता है तो वह झूठ बोल रहा है !" यहां "ऐसे समय" से तात्पर्य यह है कि जिस समय समाज, देश या विश्व मानवीय संकट के बादलों से गहरा रहा हो, मनुष्य के अस्तित्व पर, उसकी अस्मिता पर प्रश्न-चिह्न लग रहे हों, ऐसे समय में लेखक या कवि का धर्म है कि वह मौन न रहे । इधर ऐसी ही संकटकालीन स्थिति पर एक कवि ने कहा था : " ये जमीं बेच देंगे, जहां बेच देंगे ; ये मुर्दों के तन का कफ़न बेच देंगे / कलम के सिपाही अगर चुप रहे तो, वतन के ये नेता वतन बेच देंगे । " अतः असत्य कथन ही झूठ नहीं होता, सत्य के पक्ष में न बोलना, मौन रहना और भी बड़ा झूठ है । और लेखक, महान लेखक, ऐसे झूठ का पक्षधर नहीं हो सकता ।

प्रेमचन्द ने अपने समय को लिखा है, अपने इतिहास को लिखा है और आने वाले युग की पदचाप को भी पहचाना है । ऐसा लोकधर्मी, मानवधर्मी लेखक कभीअप्रासंगिक नहीं हो सकता । प्रेमचन्द के लेखन के केन्द्र में जो मानवीय-संवेदना है उसके कारण प्रेमचन्द की प्रासंगिकता आज भी बनी हुई है । आज भी उनकी दृष्टि अनुकरणीय है । उनका भाषागत आदर्श अनुकरणीय है ! कबीर की भांति प्रेमचन्द भी कभी अप्रासंगिक नहीं हो सकते । प्रेमचन्द ने अपने उपन्यासों में जिन चतुर्मुखी शोषण के मुद्दों को उठाया है, वे आज भी बरकरार है । आज भी गरीब किसानों और मजदूरों का शोषण हो रहा है । अमीर अधिक अमीर और गरीब अधिक गरीब हो रहा है । वैश्विक स्थितियों के कारण विकास दिख रहा है, पर गरीबी का भी

विकास ﴾?﴿ हो रहा है । नारी-शिक्षा का कुछ प्रचार-प्रसार हुआ है, गांवों और कस्बों में भी स्कूल-कालेजें खुल गयी हैं, पर क्या गांव की गरीब-पिछड़ी जनता तक उसकी पहुंच है ? और पिछले कुछ वर्षों में तो इस दिशा में भी पीछे-कदम हो रहा है । फिर से उस अंधेरयुग की स्थितियों के निर्माण में कुछ राजनीतिक शक्तियां सक्रिय हो गयी हैं । नारी-शोषण का चक्र अभी भी गतिशील है । दहेज की विभीषिका अब पिछड़ों में भी प्रविष्ट हो रही है । दहेज का आंकड़ा अब आकाश को छूने लगा है । दहेज हत्याएं बढ़ रही हैं । नारी का आर्थिक शोषण बढ़ रहा है । दैहिक शोषण बढ़ रहा है । नौकरीयाफ्ता नारियों को दोहरा बोझ ढोना पड़ता है । सती-प्रथा को महिमामंडित किया जा रहा है । शिशु-विवाह अभी भी हो रहे हैं । विरोध करनेवाली भावरीबाइयां भँवरों में फंसी हुई हैं । आज भी गांवों में पिछड़ी जातियों की स्त्रियों के साथ अपमानजनक व्यवहार हो रहा है । स्त्रियां बलात्कृत हो रही हैं । दलितों का दमन और दलन हो रहा है । जातिवाद बढ़ रहा है । हिन्दू-मुस्लिम विद्वेष और भी भड़क गया है । अब वह गांव-खेड़ों तक पहुंच गया है । अंध-विश्वास और रूढ़ियां भारतीय समाज पर पुनः हावी हो रही हैं । सर्वधर्म समभाव हट रहा है । दलितों के प्रति अस्पृश्यता-भाव अब मानसिक रूप धारण कर रहा है । देश का शोषण आज भी जारी है । पहले अंग्रेज करते थे अब राजनेता करते हैं । शहीदों के कोफिन तक में से कमीशन खाया जा रहा है । टाइम्स आफ इण्डिया के "थोट फोर टुडे" में लिखा जा रहा है — " सेना खून बहाती है, सरकार कमीशन खाती है ।" ﴾ टाइम्स आफ इण्डिया — दिनांक 13-12-2001 ﴿ कहां क्या बदला है ? अतः प्रेमचन्द आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं, जितने कभी अपने समय में थे, बल्कि उससे भी ज्यादा । मेरे निर्देशक महोदय की एक कविता का शीर्षक है : " तुलसी तेरी आज भी जरूरत है । ", उसे थोड़ा परिवर्तित करके मैं

कहना चाहूंगा : " प्रेमचन्द तेरी आज भी जरूरत है " ।

किसी बड़े लेखक का मूल्यांकन इस रूप में भी किया जाना चाहिए कि उसकी पुकार कहाँ तक पहुंचती है , किस हद तक वह अन्य लेखकों को प्रभावित करता है , कब तक वह उनका नेतृत्व करता है , कब तक वह दूसरों की कलमों में जीवित और पुनर्जीवित होता रहता है । अतः समकालीन औपन्यासिक लेखन के संदर्भ में प्रेमचन्द को देखने का एक प्रयास भी इस अध्ययन में हुआ है । प्रेमचन्द के उपर्युक्त सामाजिक-मानवीय सरोकार किस तरह समकालीन लेखकों को भी मथ रहे हैं , इसे उकेरने का एक नम्र प्रयास यहां हुआ है ।

समाजवादी-यथार्थवादी प्रवृत्ति , अपने समाज और समय को देखने की दूरदर्शी दृष्टि , नारी-अभिगम , दलित-अभिगम , हिन्दू-मुस्लिम एकता की हिमायत और उसके विद्वेष का विरोध ये तमाम प्रगतिशील मुद्दे जो प्रेमचन्द के लेखन में उभरकर आये हैं ; उनका विकास या चित्रण हमें डा. राही मासूम रजा , जगदीशचन्द्र , डा. रामदरश मिश्र , डा. शिवप्रसादसिंह , कृष्णा सोबती , कृष्णा अग्निहोत्री , उषा प्रियंवदा , मन्नू भंडारी , शीला रोहेकर , कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव , मोहनदास नैमिशराय , ओमप्रकाश वाल्मिक , निरूपमा सेवती , शशिप्रभा शास्त्री , मैत्रेयी पुष्पा , प्रभा खेतान, मंजूर-एहतेशाम , अब्दुल बिस्मिल्लाह आदि समकालीन औपन्यासिक लेखकों में उपलब्ध होता है । प्रेमचन्द एक युगान्तकारी लेखक हैं । ऐसे लेखक की दृष्टि वस्तुनिष्ठ होती है , अतः वह अपनी परंपरा के प्रगतिकामी तत्त्वों को संजोता हुआ , अपने समय और इतिहास की समग्रता को आत्मसात करता हुआ , आनेवाले समय की आहट को भी पहचान लेता है । प्रेमचन्द में यह हुआ है , ऐसा हम कह सकते हैं , क्योंकि इधर के समकालीन लेखकों में उनके प्रगतिशील मुद्दों की गूंज-अनुगूंज श्रुतिगोचर हो रही है । ध्रुवतारक की भांति आज भी

वे साहित्य-जगत की दशा-दिशा निर्धारित करने में पूर्णरूपेण सक्षम हैं ।

शैशवकालीन अनुभवों और संघर्षों का एक लेखक के जीवनमें सर्वोपरि महत्त्व होता है । अतः उसके परिप्रेक्ष्य में भी उसके लिखे हुए को जांचा-परखा जा सकता है । प्रेमचन्द के दादा गुरसहाय लाल ने पटवारगिरी में काफी संपत्ति अर्जित की थी और तब उनके यहाँ जाहोजलाली थी , किन्तु उनके भतीजे हरनरायनलाल ने धोखाधड़ी से प्रेमचन्द के ताऊ महावीरलाल से साठ बीघा जमीन हड़प ली ।अतः उनका परिवार पुनः आर्थिक तंगदस्ती की स्थिति में आ गया । प्रेम-चन्दजी के पिता मुंशी अजायबलाल पर अपने भाइयों के घर-परिवार का उत्तरदायित्व था , अतः वे हमेशा आर्थिक दृष्टया तंग स्थिति में रहे । आठ साल की कच्ची उम्र में उनकी माता का निधन हो गया । घर में सौतेली मां आयी । उनकी सलाह से ही प्रेमचन्द का ब्याह एक उम्र में बड़ी , कुरूप , चेचकरू , अफीमची औरत से कर दिया गया । उसके एक-डेढ़ साल बाद उनके पिता भी स्वर्ग सिधार गये । सत्रह साल की उम्र में प्रेमचन्द पर सौतेली मां , सौतेले भाई , बहनों आदि सभी का बोझ आ गया । अतः उनको शैशवकाल से ही आर्थिक-पारिवारिक संघर्षों से गुजरना पड़ा । आर्थिक अभाव , दरिद्रता , जीवन-संघर्ष , मां के प्यार की तड़प , सौतेली मां के त्रास , अनमेल-विवाह की त्रासद स्थितियां , असुरक्षा की भावना आदि से अभिशप्त मुंशी प्रेमचन्द का बचपन दर्द और दहशत से भरा हुआ है । इनके इस अभिशप्त शैशव की विभीषिकाएं , उनका मूक रूदन और सिसकियां हमें उनके "वरदान" से लेकर "गोदान" तक के सभी उपन्यासों में दृष्टिगोचर और श्रुतिगोचर होते हैं ।

एक बड़ा लेखक , एक महान लेखक , एक युग-प्रवर्तक लेखक हमेशा उत्पीड़ित मानवता का पक्षधर होता है । यदि लेखक स्वयं

दलित या पीड़ित न भी रहा हो , तो भी उसे दलितों-पीड़ितों का पक्षधर होना चाहिए । यही उसका वाल्मीकि-धर्म है , यही उसका बब्रुवाहनी-धर्म है । न्याय और विवेक के दो ध्रुवों के बीच उसके लेखन की जमीन होनी चाहिए । इस दृष्टि से देखें तो प्रेमचंद में प्रारंभ से ही ये मुद्दे हमें मिलते हैं । "देवस्थान-रहस्य" , "प्रेमा" , "वरदान" , "सेवासदन" आदि उपन्यासों में दलित-विमर्श की भूमिका दृष्टिगत होती है ; तो "प्रेमाश्रम" , "रंगभूमि" , कर्मभूमि" , "गोदान" जैसे उपन्यासों में हमें प्रेमचन्द के दलित-विमर्श के विभिन्न आयाम और विकास दृष्टिगोचर होता है । "कर्मभूमि" उपन्यास के तो केन्द्र में ही अछूत-समस्या है । ग्रामीण एवं शहरी धरातलों पर दलित-परिस्थितियों को यहां उन्होंने संकेतित किया है । अछूत समस्या का एक पक्ष जो उन्हें सर्वाधिक पीड़ित करता है वह है उनसे लिया जानेवाला बेगार । किसी लिहाज से यहां उन्हें कोई औचित्य नजर नहीं आता है । अतः अपने सभी उपन्यासों में वे इसका पूरी शक्ति के साथ विरोध करते हैं । बेगार प्रथा में अछूत तबकों के आर्थिक शोषण की सामंती अन्तर्वस्तु का मूर्तिमंत स्वरूप दृष्टिगत होता है । एक मानवीय अधिकार के रूप में मंदिर-प्रवेश की समस्या को वे उठाते हैं , किन्तु उन्हें हमेशा इस बात का अहसास रहता है कि आर्थिक प्रश्नों को हल किये बिना , उन्हें पूरी मानवीय गरिमा के साथ जीवन-यापन के अवसर प्रदान किये बिना , अछूत-समस्या के निवारण की बात कोरी बौद्धिक लीपा-पोती होगी । अतः शहरों में वे इन गरीब मेहनतकश दलित तबकों के रिहायिश की समस्या पर अपना ध्यान केन्द्रित करते हैं । "गोदान" में वे दलित-विमर्श को वर्ग-संघर्ष की स्थिति तक ले गये हैं ।

इस प्रकार प्रस्तुत प्रबंध में प्रेमचन्द के औपन्यासिक को नाना आयामों और कोणों से देखने परखने का प्रयत्न किया गया

है । अभी और भी आयाम, और भी दृष्टिबिन्दु हो सकते हैं । एक बड़े लेखक का अध्ययन किसी भी दृष्टि से किया जाय, कुछ तो अन-चिह्नित, अनछुआ रह ही जाता है । मुंशीजी के अलग-अलग जीवन-संघर्षों को लेकर, उनकी जीवनियों और पत्रों के ~~सन्दर्भ~~ सन्दर्भ में, उनके समकालीनों से पत्राचार के सन्दर्भ में, ~~तत्कालीन~~ तत्कालीन समय और इतिहास के संदर्भ में, प्रेमचन्द के समकालीन अन्य प्रान्तीय लेखकों के लेखन के संदर्भ में, शिल्प और भाषिक-संरचना के सन्दर्भ में, कथा-स्रोतों के संदर्भ में; गरज कि कई ऐसे पक्ष और आयाम हैं जिन पर अभी विचार-विमर्श की गुंजायश है ।

शोध-अनुसंधान और समीक्षा के रास्ते पर यह मेरा प्रथम ~~प्रथम है~~ चरण है । अपनी सीमाओं और मर्यादाओं से मैं भलीभाँति अवगत हूँ । अतः अन्ततः प्रार्थित हूँ कि मेरा यह प्रयास यदि भविष्यत अनुसंधित्सुओं तथा प्रेमचन्द के अध्येताओं को अल्पातिअल्प परिमाण में भी काम आ सका तो अपने सारस्वत श्रम को मैं सार्थक समझूँगा ।

—: इति शुभम :—